छुट्टी का दिन

जयश्री रॉय

छुट्टी का दिन

आज रविवार है, यानी छुट्टी का दिन। मैं सुबह से ही शाहजहाँनी मूड में हूँ। खूब देर से उठकर चार घी चुपड़े आलू के पराठे दही के साथ खाकर ड्राइंगरूम में कूलर लगाकर दीवान पर मय अखबार पसर गया हूँ। जाहिर है मेरी बीवी से मेरा यह सुख देखा नहीं जा रहा है। अंदर ही अंदर कुढ़ रही है और किसी न किसी बहाने बार-बार सामने आकर अपनी भँड़ास निकाल रही है।

इतने वर्षों में उसकी निरंतर बड़बड़ाहट का मैं आदी हो चुका हूँ। उसका बोलते रहना मेरे किसी काम में बिघ्न नहीं डालता। ऊपरवाले ने एक दहाना दिया है, फाड़ती रहे।

https://www.hindiadda.com/chhuttee-ka-din/

उसकी घमासान बमबारी के बीच मैं आराम से अखबार बाँच सकता हूँ या मीठी नींद में खर्राटे भर सकता हूँ। एक अरसा हुआ, मैंने उसकी सुननी छोड़ दी है। यह अलग बात है कि उसने बोलना कभी नहीं छोड़ा। बस यही विडंबना है। स्त्री-पुरुषों की आनुवंशिक बीमारी मानकर अब मैंने इस पर ध्यान देना छोड़ दिया है। मगर कहावत है कि देह पर मल का लेप लगा लेने से भी यम कभी पीछा नहीं छोड़ता, फिर यह तो मेरी पत्नी थी, सात जन्मों के साथ का अलौकिक परमिट लिए।

मेरे सुख में बिघ्न डालने के लिए एक नया उपाय ईजाद कर अब वह ढेर सारी रद्दी के पहाड़ से लदी-फदी मेरे सामने आ खड़ी हुई है - अखबार पढ़ लिए तो दो, रद्दीवाले को देना है। मैं अखबार से नजर उठाए बिना गंभीर मुख-मुद्रा बनाकर ना में सिर हिलाता हूँ। पत्नी के सामने मैं हमेशा ही बहुत गंभीर बना रहता हूँ ताकि वह अपनी मर्यादा की लक्ष्मणरेखा पारकर मुझ पर चढ़ाई न कर सके। उसके भयंकर तेज और अग्निरूपा रणचंडी स्वरूप के आगे मेरा यह एकलौता डिफेंस है। मेरी गंभीर मुख-मुद्रा देखकर वह थोड़ा नरम पड़ जाती है। ज्यादा दुस्साहस नहीं करती।

वैसे भी मेरी पत्नी जब अपने चेहरे पर एक सौ एक किस्म की शिकायतें लेकर गला खखारती हुई सामने हाजिर होती है, मैं समझ जाता हूँ महिषासुर मर्दिनी आज अपने पूरे फार्म में है और तत्क्षण एक कछुए की तरह अपने सुरक्षित खोल के अंदर घुस जाता हूँ। चेहरे पर भयंकर गांभीर्य के भाव पैदाकर ऐनक चढ़ाकर किताब में सिर घुसा लेता हूँ। भाव ऐसा कि इस वक्त मै 'वार एंड पीस' सरीखे किसी गुरु गंभीर साहित्य के अध्ययन में लीन हूँ। जबकि यथार्थ में मैं किसी दोयम दर्जे के दैनिक में 'संता-बंता' मार्का चवन्नी छाप जोक पढ़ रहा होता हूँ और बड़ी कठिनाई से अपनी खींसे निपोड़ने की इच्छा को संयत कर रहा होता हूँ।

मगर आज मेरा ये फार्मूला पता नहीं क्यों काम नहीं कर रहा था। श्रीमतीजी पर सुबह से ही मानो देवी आई हुई थी। फर्श पर अखबार पटककर वह स्टेनगन की तरह तड़तड़ाकर चलने लगी थी - रात-दिन या तो दफ्तर में झख मारते रहते हो या अखबार, इंटरनेट में मुंडी घुसाए रहते हो, आखिर मैं किससे अपनी परेशानी कहूँ। पूरा घर बिगड़ता जा रहा है। बच्चों को बड़ों का कोई लिहाज नहीं। बेटा सुबह-शाम फेसबुक पर, बेटी मोबाइल पर और तुम्हारी पूज्य माताजी मेरे सर पर... और तुम... बंदूक की नली मेरी तरफ घूमते ही अचानक बिना सर्दी-जुकाम के मेरे गले में बलगम घड़घड़ाने लगता है और मैं तीव्र गति से खाँसने लगता हूँ। यह एक तरह का शॉक ट्रीटमेंट है जो ऐसी स्थितियों में मैं उसे देता रहता हूँ। अपने पुराण-वाचन में उपस्थित हुए इस आकस्मिक व्यवधान से श्रीमतीजी एक क्षण के लिए किंकर्तव्यविमूढ़-सी खड़ी रह गई

थीं और फिर चेहरे पर वितृष्णा का अथाह भाव लिए कमरे से पाँव पटकते हुए निकल गई थीं।

इधर फर्श पर अनाथ की तरह पड़े पचास अखबारों के तीन-चार सौ पन्ने एक साथ एक ही आवाज में चमगादड़ की तरह फड़फड़ाने लगे थे। लगा था अचानक से सुनामी आ गई है।

सुबह-सुबह संडे का मजा बिगाड़ देने के लिए जी चाहा था बीवी की ऐसी की तैसी कर दूँ मगर फिर अपनी भावनाओं पर काबू कर गया था। अब वह बीस साल पहलेवाली नाजुक फूलों की छड़ी जैसी बीवी नहीं, वर्तमान की नब्बे किलो की 'खूब लड़ी मर्दानी' वाली बरेलीवाली बीवी थी जिसे छूकर मैं अपनी जान का खतरा मोल नहीं ले सकता था। पिछली बार मजाक-मजाक में मेरी कलाई मरोड़ दी थी। सात दिनों तक बाएँ हाथ के निकृष्ट काम दाएँ से निपटाने पड़े। उस हादसे के बाद मैने तौबा कर ली है, जंगली हाथी से भिड़ जाऊँगा, मगर इस जल हस्थी से नहीं।

अचानक मैसेज अलर्ट से मेरी गहरी सोच में खलल पड़ गया था। मोबाइल का स्क्रीन चमक रहा था। लपक कर देखता हूँ, कोमोलिका का मैसेज है - टैगोर की दो भावुक पंक्तियाँ - जे राते मोर दुआर गुली भांगलो झड़े... हमेशा की तरह बात सर के ऊपर से गुजर गई... मगर मुद्दा ये कि मैसेज लालित्यमयी कोमोलिका देवी की तरफ से प्रेषित हुआ था। यस! अपने दोनों हाथों को कुहनी से पीछे की तरफ मोड़कर झटक देता हूँ - पोड़ी फँसली रे फँसली... ये नवदुर्वा जैसी रंगतवाली श्यामल बंगालन छह महीने से भाव खा रही थी। किसी कस्बे से स्थानांतरित होकर हमारे हेड ऑफिस में आई थी। सुना था पति अपनी नौकरी की वजह से इसके साथ नहीं रह पाता है। यहाँ वह किसी के घर पेइंग गेस्ट बनकर रह रही थी। मुँह पर जब देखो इतना बड़ा अलीगढ़ का ताला और सामने फाइलों का स्तूप! जैसे पूरे दफ्तर में उसी ने सबके काम का ठेका लिया हुआ हो। रोज दफ्तर से निकलकर हम दोनों आगे-पीछे चलते हुए एक ही बस स्टॉप पर खड़े होकर पंद्रह-बीस मिनट तक अपनी-अपनी बस का इंतजार करते मगर वह कभी हाँ-हूँ से आगे बात बढ़ने ही नहीं देती।

वैसे सच पूछो तो इस भारी नितंबोंवाली स्त्री के पीछे-पीछे रोज एकाध घंटे तक चलना मुझे बुरा भी नहीं लगता था। एक तरह से मुफ्त में नयनसुख मिल जाता था। वह आगे-आगे बतख की तरह कूल्हे मटकाते हुए नाजो-अदा से चलती और मैं पीछे-पीछे अपने अंदर एक दबी हुई उत्तेजना महसूस करते हुए बार-बार अपना लाल-भभूका हो रहा चेहरा पोछते हुए चलता। अपने एक ही रूमाल से मोड़-मोड़कर कभी मैं चेहरा साफ

करता तो कभी अपने जूते। नहीं, ऐसा नहीं कि मुझे ऐसा करने में कोई विकृत किस्म का सुख मिलता। दर असल मेरी बीवी ने अपने इतने सालों की संगत से मुझे महाकिफायती बना दिया है। वह एक पत्ती में तीन बार चाय उबालकर पीती है। साबुन की बट्टी ताले-चाभी में डालकर पोखर की चिकनी मिट्टी से बाल धोती है। यही नहीं, वह अम्मा के दूध में प्योर गंगाजल मिलाती है। कहती है - सेहत की सेहत और पुण्य का पुण्य... उधर अम्मा बिचारी ये सोचकर परेशान कि रोज काँसे के गिलास में आधा सेर दूध का सेवन करके भी चुरमुराती क्यों जा रही हैं! मै भी सालों से दो चड्ढी-बनियान में बारह महीने गुजार रहा हूँ। मोजे से जब तक दसों अँगुलियाँ कछुए की तरह बाहर गर्दन निकालकर झाँकने नहीं लगतीं वह मोजे का नया जोड़ा नहीं खरीदने देती। अचानक से कभी कुछ खरीदने का हमारे यहाँ कोइ प्रोविजन नहीं था। मगर अपने मायकेवालों के लिए उसका मन मन भर का था। जब तब उसके तीन-तीन मुसटंडे भाई आ धमकते और वह घी की हंडी उड़ेलकर पूरी-कचौड़ी तलने बैठ जाती।

खैर अपनी पत्नी के बाकी गुण फिर कभी बघारेंगे, अभी तो मै कोमोलिका सुंदरी की बात कर रहा था। हाँ तो इस तरह से चलते हुए लंबे रास्ते का पता ही नहीं चलता। हम चल रहे थे, वो चल रही थी, मगर दुनियावालों के दिल जल रहे थे... अरे! ये तो वाकई एक गीत बन गया!... क्या कह रहे हैं? ऐसा एक गीत ऑलरेडी है? धत! कवि बनने का आखिरी चांस भी गया... चल, जाने दे, कोइ गल्ल नहीं!

तो मोटी बात ये कि चल-चलकर मै दुबला हो रहा था, मगर कोई फायदा नहीं हो रहा था। किसी भी तरह बात बनती न देख एक दिन मैं पुस्तक मेले से टैगोर की दो-चार किताबों का अंग्रेजी अनुवाद खरीद लाया था। एक तो अंग्रेजी जैसी फनी लैंग्वेज उस पर बंगाली भावुकता के पितामह टैगोर की कविता - सब कुछ सर के ऊपर से गुजर गया। किसी तरह दो-चार पंक्तियों के भाव ग्रहण करने में सक्षम हो सका।

एक बार डिपार्टमेंट के कार्यक्रम में गरम समोसे के साथ टैगोर की दो-चार नरम-नरम पंक्तियाँ परोस दी। तालियों के बीच कनखियों से देखा तो कोमोलिका अपनी काली, डागर आँखों से मुझे विस्मय-विमुग्ध होकर देख रही थी। तीर इस बार ठीक मछली की आँख पर बैठा था। उस शाम वह चपल हिरणी गजगामिनी होकर मंथर गति से चल रही थी। संकेत पाते ही मैं चीते की तरह दो छलाँग में उसके पास जा पहुँचा था, एकदम सिंकारा एनर्जी टानिक के माडल के माफिक! उसने अपने टोल खाते गालों से हल्के से मुस्कराकर मुझे न जाने किस नजरों से देखा था। मेरे अंदर एक भयानक विस्फोट हुआ था और इसके साथ ही मैंने महसूस किया था मुझे उससे प्रेम हो गया है।

हालाँकि प्रेम तो मुझे प्रायः ही किसी न किसी के साथ होता रहता है मगर इस बार बात प्रेम से आगे की कोई गंभीर-सी चीज लग रही थी।

आजकल मुझे बात-बात पर रोना आने लगा था। उस दिन संडास में बैठकर लोटा भर रोया था। बैठे-बिठाए नाक सुरसुराने लगती और मैं अपने बाबरी बालों की जुल्फे लहराकर छत पर जा बैठता और चाँद देखने लगता। अम्मा ओझा बुलाकर मेरी झाड़ू से कसकर पिटाई भी करवा चुकी थी। मगर नतीजा ढाक के तीन पात... रातों को जाग-जागकर उल्लू की तरह दिखने लगा था। चाँद के हाला की तरह आँख के चारों ओर काला पड़ गया था। २४ घंटे दिल मे बनी रहनेवाली कसक सायको-सोमेटीक सिम्टम बनकर भीषण कब्ज का रूप धारण कर चुकी थी। जब अंदर का हाल ऐसा हो तो चेहरे का नक्शा भी बदलना ही बदलना था। लोग कहते शर्माजी के चेहरे पर आजकल हमेशा १२ ही बजा रहता है। मै अपने १२ बजेवाला चेहरा लेकर जिधर से गुजरता उधर फुसफुसाहट पड़ जाती।

मै इधर अलग परेशान। मुझे खयाल आया था कि लोग कहते हैं, बंगालनें जादूगरनी हुआ करती हैं। मगर अब क्या किया जा सकता था, मुझ पर तो उसका जादू चल ही गया था। अब कान झुका कर उसके पीछे-पीछे बलि के पठरु की तरह चलने के सिवा और चारा भी क्या था।

मुस्कराकर उस दिन वह थोड़ी देर के लिए मेरे साथ एक रेस्तराँ में बैठने के लिए राजी हो गई थी। मन मसोसकर मुझे उसे एक अच्छे से रेस्तराँ मे ले जाना पड़ा था। फर्स्ट इम्प्रेशन इज द लास्ट इम्प्रेशन का खयाल करके।

मेरे मुँह से टैगोर की कविता सुनकर वह मुझे कोई सुरुचिसंपन्न कवि टाइप का व्यक्ति समझने लगी थी शायद, जबकि अपनी दृष्टि में मैं बिल्कुल एक बनिया किस्म का आदमी था। जिंदगी भर नून-तेल के हिसाब में बीत गया था और उस समय भी मेन्यू कार्ड देखते हुए मैं मन ही मन हिसाब-किताब में उलझा हुआ था। जब तक लड़की की तरफ से शारीरिक सामीप्य का कुछ ठोस किस्म का आश्वासन न मिल जाए तब तक उस पर ज्यादा व्यय करना उचित नहीं होगा। दो लाइम सोडा का आर्डर देते हुए मैंने उदासीन भाव से कहा था - मुझे एसिडिटी हो रही है, इस वक्त कुछ खा नहीं सकूँगा। वैसे आप क्या लेंगी?

मैं जानता था, एक बार आर्डर दे चुकने के बाद उसकी तरह की कोई भी मध्यमवर्गीय महिला संकोच से कुछ और आर्डर नहीं दे पाएगी।

वह अपनी मुलायम आवाज में काजी नजरुल डिस्कस कर रही थी और मैं अपनी मुँह पर दिग्गज-सा भाव ओढ़कर आप्राण उसकी साड़ी के किंचित ढलक जाने से गहरे गले की ब्लाउज से आधे चाँद की तरह झाँकते उसके शरीर की तरफ देखने से बच रहा था। स्त्रियों की छठी इंद्रियाँ इन मामलों में बहुत सजग होती है, वे झट से भाँप जाती हैं कि कौन किस नीयत का है। अपनी पहली मुलाकात का उस पर अच्छा प्रभाव छोड़ने के लिए मैं कुछ ज्यादा ही भद्रलोक बनने का प्रयास कर रहा था वर्ना वह मुझे लोभी कुत्ते की श्रृंखला में डाल देती।

इसके बाद वह अधिकतर शामों को मेरे साथ इधर-उधर समय व्यतीत करने लगी थी। धीरे-धीरे कछुए की तरह वह अपने खोल से बाहर निकल आई थी। मुझे पता चला था अधिकांश मध्यमवर्गीय स्त्री की तरह वह भी अपने विवाहित जीवन में अकेलेपन और उपेक्षा की शिकार है। वह अपना जीवन, अपनी भावनाएँ अपने पति के साथ शेयर करना चाहती है, मगर उसका पति नब्बे प्रतिशत पतियों की तरह उसकी भावनाएँ नहीं समझता, उसकी बात नहीं सुनता, उसकी उपेक्षा करता है, इत्यादि-इत्यादि... उसकी बातें अपने चेहरे पर हमदर्दी और आँखों में करुणा लिए मैं अर्धनारीश्वर बना अपनी जम्हाई जबरन रोके सुनता रहता और मौका देखकर सहानुभूति जताते हुए उसका हाथ भी दबा देता। वह मुझे एक संवेदनशील पुरुष समझती जिसे स्त्री-पुरुष के संबंधों में बराबरी का यकीन रहता है। मैं मन ही मन सोचता यदि मेरी पत्नी को यह अवसर मिले तो वह भी यही पुराण किसी सहृदय पुरुष को सुनाने से बाज न आए।

दो-चार मुलाकातों में ही मैने समझ लिया था, वह निहायत ही भावुक किस्म की बंगाली स्त्री थी। इससे मेरा काम जरा आसान हो गया था। मैं उसे किसी रेस्तराँ में ले जाने की बजाय गंगा के किनारे ले जाता और दो रुपए की मूँगफली खिलाकर चार-पाँच अदद कविताएँ सुना डालता था। सब कुछ सस्ते में निपट जाता। महीने की पहली तारीख को गिन-गिन कर मुझसे पगार लेते हुए बीवी भी खुश और महीने भर में सौ रुपए की मूँगफली खाकर मेरी बंगालन प्रियतमा भी खुश। लोग सच ही कहते हैं कि बंगाल में भाषण और प्रेम आज भी बहुत सस्ता है। रुपए के दस के भाव से नेता और तीस मूँगफली की पुड़िया दर महीने एक रोसोगोल्ला सरीखी प्रेमिका... राम राज्यो आर किसको बोलता है!

मोबाइल की तरफ देखते-देखते न जाने मैं कब सो गया था। कामवाली ने पोंछा लगाना शुरू किया तो मेरी नींद खुली। सामने हमारी कॉलोनी की उर्वशी यानी कामवाली कांता बाई फिरकी की तरह घूम-घूम कर फर्श पर पोंछा लगा रही थी। जमीन पर उकड़ूँ बैठकर आगे की तरफ झुककर लय के साथ फर्श पर हाथ चलाते हुए

उसके पूरे शरीर में एक मादक-सी थिरकन व्याप रही थी। मराठी ढंग से बाँधी गई तंग साड़ी से उसके विपुल नितंब मेरे ऐंगल से उलटे नगाड़े की तरह दिख रहे थे। यकायक किसी आदिम इच्छा से भरकर मेरा मन हुआ था उठकर उन्हें दनादन बजा दूँ। अभी मैं अपनी योजना के औचित्य-अनौचित्य पर विचार कर ही रहा था कि पत्नी देवी फिर कमरे में प्रकट हो गईं। घुसते ही जाहिर है, उसने सारा माजरा समझ लिया था। एक दृष्टि उसने मुझ पर डाली और दूसरी कामवाली पर। मैं अपनी आँखें विड़ाल तपस्वी की तरह बंद करके पड़ा था और कामवाली भी अपना आँचल ठीक कर चुकी थी। मैं उसे उसकी मालकिन की दृष्टि बचाकर छोटी-मोटी मदद कर दिया करता था और वह भी कृतज्ञतास्वरूप मेरे सामने यदा-कदा अपना पल्लू दुरुस्त करना भूल जाती थी। हम दोनों में एक मौन समझौता था, मगर मेरी श्रीमतीजी जिनकी नाक सर्दी से बारहों महीने बंद रहा करती थी न जाने कैसे सब कुछ सूँघ लेती थीं। कई बार वह हमारे असतर्क क्षणों में अचानक प्रकट होकर छापा मार बैठती। इसी क्रम में तीन नौकरानियों की अब तक छुट्टी हो चुकी थी और अब मुझे आभास हो रहा था कि इस चौथी वाली का भी निष्कासन आसन्न था।

अपनी अँगीठी जैसी गरम आँखों से उसे एक मौन धमकी देकर वह मेरी तरफ मुड़ी थी - 'प्रभु! आप आज मध्याह्न भोजन में क्या ग्रहण करेंगे?'

उसके स्वर में बजबजाते व्यंग्य से तिलमिलाकर मैं आँखें खोलता हूँ और फिर उसकी भीषण मुद्रा देखकर अपना पैंतरा बदलकर नरम स्वर में कहता हूँ - 'कुछ भी बना लो। जो तुम्हें ठीक लगे, वैसे तुम्हारी हाथ का कुछ भी बना स्वादिष्ट ही होता है।' बात समाप्त करते ही मुझे लगा था, मस्का कुछ ज्यादा हो गया। अभी-अभी नौकरानी के नितंबों का दृष्टिभोग करके मैं जो अपने पत्नीव्रत के पथ से क्षणांश के लिए भटका था, उसकी ग्लानि इस अतिरिक्त मधुर वाणी से मेरी चतुर जीवनसंगिनी पर व्यक्त हो गई होगी।

सचमुच वह मेरे सामने खड़ी मुझे हिंसक भाव से देर तक घूरती रही थी। अंदर तो जान धुकधुका रही थी मगर ऊपर से मैं भी निर्विकार भाव से माँजर की भाँति आँखें मिचमिचाए पड़ा रहा था। थोड़ी देर बाद वह दुंदुभी की तरह अपने पैरों के नीचे धरती में कंपन उत्पन्न करती हुई चली गई थी। नौकरानी भी न जाने कब भाग खड़ी हुई थी।

अवसर पाकर मैं फिर कांता बाई के नितंबों पर ध्यान एकाग्र करने का प्रयत्न कर ही रहा था कि बाहर से पत्नी देवी का कर्णभेदी स्वर सुनाई पड़ा। वह अपनी पड़ोसन से दही जमाने के लिए थोड़ा जामन माँग रही थी। पड़ोसन अमला ने भी उतनी ही ऊँची

आवाज में जवाब दिया था कि अभी वह नहा रही है। थोड़ी देर बाद जामन भिजवा देगी। उसकी बात मेरे कान में पड़ते ही मैं इस तरह से औचक खड़ा हो गया था जैसे कोई स्प्रिंग लगा गुड्डा।

हमारे बाथरूम के रोशनदान से अमला भाभी का पिछला आँगन दिखता था। आँगन के एक कोने को घेरकर उनके गुसल की छोटी-सी जगह थी जिसमें दरवाजे की जगह टाट का पर्दा लगा हुआ था। दोपहर में जब अधिकतर घर में कोई नहीं होता था, वह टाट का पर्दा गिराए बिना ही नहाती थी। एक बार अपने बाथरूम के रोशनदान पर मकड़ी के जाले साफ करते हुए मुझे इस बात का पता चला था और फिर उस दिन के बाद मैं न जाने कितनी बार छिप-छिप कर बाइस्कोप देख चुका था। मुझे ऐसा लगता था जैसे मुझे बैठे बिठाए अली बाबा का खुल जा सिम-सिम वाला मंत्र मिल गया है। जब मन चाहे मैं खुल जा सिम-सिम कहता और मेरे सामने तिलस्मी दुनिया का भव्य दरवाजा खुल जाता... अंदर मेरी भाभी अर्थात श्रीमती अमला त्रिपाठी मंदाकिनी स्टाइल में स्नान करती हुई दिखतीं और मैं शरीफ आदमी संकोच और नैतिकतावश एक आँख मूँदे सिर्फ एक आँख से, वह भी तिरछी नजर से देवी का जलाभिषेक देखता। संबंध में वह मेरी मुँहबोली भाभी लगती थीं, फिर अम्मा भी कहती हैं - पराई नार को बुरी नजर से नहीं देखना चाहिए, इसीलिए मैं बहुत अच्छी नजर से (मेरी दूर की नजर बहुत अच्छी है) उन्हें अच्छी तरह देखते हुए अच्छी-अच्छी बातें सोचा करता था, मसलन यदि मुझे कभी उनकी सेवा करने का अवसर मिल जाए तो मैं किस भाँति तथा भाँति-भाँति से उनकी सेवा करके उन्हें तुष्ट, संतुष्ट करूँगा ताकि उन्हें अपने इस देवर पर नाज हो सके।

अमला भाभी को नहाते हुए देखते हुए शायद मेरा मुँह कुछ ज्यादा ही खुल गया था। एक मक्खी भिनकते हुए मुँह के अंदर चली गई तो जोर-जोर से खाँसते हुए बाल्टी जिसे उल्टा कर के उस पर मैं चढ़ा हुआ था, समेत नीचे गिर पड़ा। चहबच्चे के कोने से सर टकराया तो तत्काल माथे पर एक आलू के बराबर गूमड़ निकल आया। आवाज सुनकर पत्नी ने प्लास्टिक का दरवाजा भड़भड़ाकर एक ही मिनट में खोल डाला। अंदर मुझे भीगे हुए कुर्ते पाजामे में इस तरह से भीगी बिल्ली की तरह खड़े हुए देखकर उसकी आँखें एक बार गिद्ध की भाँति सिकुड़ गईं। मै अपना सर सहलाता हुआ कोई अच्छा-सा बहाना ढूँढ़ रहा था और वह कमर पर दोनों हाथ धरे जासूस गोपीचंद की तरह स्थिति का मुआयना कर रही थी। मुझे उसके भिंचे हुए होठों में अदृश्य सिगार दिख रहा था जिससे धुएँ के छल्ले उठकर रोशनदान की तरफ जा रहे थे। रोशनदान की तरफ उसकी दृष्टि निबद्ध देखकर मेरा कलेजा सूख गया था। उसका ध्यान उधर

से हटाने के लिए मैं तत्काल सर चकराने का बहाना करते हुए लड़खड़ाने का अभिनय करने लगा था। उसने मुझे थामकर शयनकक्ष में लाकर बिस्तर पर लिटा दिया था। आँखें बंद किए लेटे-लेटे मैं सोच रहा था इस बार भी हनुमानजी की कृपा से मैं बच गया। आनन-फानन में मैंने पाँच रुपए के लड्डू चढ़ाने की मन्नत मान ली।

पिछली बार प्लास्टिक की बाल्टी पर चढ़ने से बाल्टी पिचक गई थी और मैं मुँह के बल चहबच्चे में घुस गया था। उस दिन अगर पत्नी ने पीछे से आकर मुझे बाल पकड़कर बाहर निकाला न होता तो मेरी निश्चित ही जल समाधि हो जाती। उसके बाद बाजार जाकर मैं लोहे की बाल्टियाँ खरीद लाया था ताकि उन पर खड़े होकर निश्चिंत दूसरी तरफ का नजारा लिया जा सके।

यह सब मैं सोच ही रहा था कि तभी पत्नी की चीख सुनकर चौंक पड़ा था। थोड़ी ही देर बाद व घबड़ाई हुई अंदर आई थी। उसके चेहरे का रंग उड़ा हुआ था। मेरे पास बैठकर काँपती हुई उसने रुक-रुक कर कहा था - 'वो...वो... वो...। रोशनदान...। बाथरूम...।'

'बाथरूम! रोशनदान!' ये शब्द सुनते ही मेरे देव कूच कर गए थे। इस बार तो मैं जरूर पकड़ा गया! हे इश्वर!

मेरी बातों पर ध्यान न देकर वह हकलाती हुई कहती रही थी - 'वो त्रिपाठी भाई साहब... खुले आँगन में... ऐसे नहाते हैं... छि: कोई बच्चे हैं, इतने बड़े होकर नंगे नहाते हैं... 'सुनकर मेरे सामने सारा मामला स्पष्ट हो गया था। जरूर मेरे पीछे श्रीमती जासूसी करने रोशनदान से झाँकीं होंगी... तो अमला भाभी की तरह त्रिपाठी भाई साहब भी दिगंबर होकर... अचानक जैसे मुझे राहत मिली थी... कि चलो मेरी चोरी पकड़ी नहीं गई। मगर फिर दूसरे ही क्षण यह सोचकर कि मेरी पत्नी त्रिपाठी भाई साहब को विवस्त्र देख चुकी है, मुझे जोर का झटका लगा था। त्रिपाठी भाई साहब सुदर्शन पुरुष हैं। अपनी भूड़ि पर हाथ फेरते हुए मेरा दिल बैठने लगा था। बिगड़े बच्चों को ही सँभाल नहीं पा रहा, अब बीवी बिगड़ गई तो... मेरी तरह मेरी पत्नी को भी क्लाइडोस्कोप देखने का शौक लग गया तो...

तत्क्षण मेरी मुट्ठियाँ भिंच गई थीं - 'बेशर्म औरत! तुम्हें क्या आवश्यकता पड़ी थी, दूसरों के घर में झाँकने की? क्या मेरे पीछे यही सब करती फिरती हो? तुम्हें अपनी मर्यादा का भी खयाल नहीं, एक विवाहित स्त्री होकर...' मेरी बातें सुनकर मेरी पत्नी का चेहरा फक पड़ गया था। वह भयभीत नेत्रों से मुझे देख रही थी। मैं उठकर दाँत पीसते हुए बाहर निकल गया था - आज ही मजदूर बुलाकर ये रोशनदान बंद करवाता

हूँ। और तुम्हें भी इसी दीवार से अनारकली की तरह चुनवाता हूँ! पत्नी पीछे से पुकारती रह गई थी और मैं घर से निकल कर निरुद्देश्य चल पड़ा था।

थोड़ी दूर जाने पर मुझे गुड्डी की सहेली मधु दिख गई थी। उसने मुझे देखते ही हलो अंकल कहकर हाथ हिलाया था। 'हलो बेटा!' माडर्न अंकल बनकर मैंने उसके अभिवादन का जवाब दिया था और कुछ दूर निकलते ही मुड़कर पीछे से उसे देख था। टाइट जींस और टीशर्ट में उसका फिगर बहुत सुंदर दिख रहा था। अपने उश्रंखल होते विचारों को मैंने लगाम लगाया था - मेरी बेटी गुड्डी की सहेली है... इसके बाद बिना सोचे समझे मैं तिवारीजी के घर में घुस गया था क्योंकि यही घर सबसे पहले दिखा था। तिवारी जी खा-पी कर अभी-अभी डकार लेते हुए बैठे थे और झाड़ू की काठी से अपने दाँत खोद रहे थे। मुझे देखते ही उन्होंने शतरंज बिछा दिया था। उनकी पत्नी ने मुझे पानी का गिलास पकड़ाते हुए मुँह बनाया था, पर मैंने बुरा नहीं माना था। उसका रंग दूध जैसा गोरा था और गोरे लोगों के चेहरे की कोई भी भंगिमा मुझे बुरी नहीं लगती। पहली बार पानी पीते हुए मेरे ध्यान में आया था कि उनके भी नहाने की जगह आँगन के एक कोने में है। मेरा हृदय श्रीमती तिवारी के स्नान दृश्य की कल्पना करते हुए फिर से धुकधुकाने लगा था।

शतरंज की चार-पाँच बाजियाँ खेलकर शाम ढलते-ढलते जब मैं अपने घर लौटा, मेरी पत्नी ने रो-रो कर अपना बुरा हाल कर लिया था। उसे शायद लगा था मैं गुस्से में घर त्याग कर कहीं गया हूँ। खैर मैं उसके इस भ्रम को बनाए रखना चाहता था इसलिए मन ही मन उसकी दयनीय स्थिति का आनंद उठाते हुए चेहरे पर दुर्वासा का-सा भाव लिए कमरे के अंदर जा बैठा। मेरी अम्मा एक सनातन सास की सफल भूमिका निभाते हुए अपनी बहूरानी को आँगन की खटिया पर पसरकर लगातार कोसे जा रही थीं। मैं कनखियों से उसकी मुख-मुद्रा देखकर मजा ले रहा था। अब आया है ऊँट पहाड़ के नीचे। अपनी दुर्दांत पत्नी की ये बेचारी-सी अवस्था देखकर मैं अंदर ही अंदर एक हिंसक प्रसन्नता से भरा जा रहा था।

थोड़ी ही देर में बहुत समारोह के साथ मेरे सामने छप्पन भोग परोसा गया - पूड़ी, निमोना, अचार, मखाने की गाढ़ी खीर... भोजन देखते ही पेट के अंदर मेरी अँतड़ियाँ चटक उठी थीं। याद आया था आज दोपहर मैंने भोजन किया ही नहीं। सुबह के चार पराठे कब के हजम हो चुके थे। अपनी लालच दबाए मै बहुत देर तक मुँह भारी करके ना-नुकुर करता रहा था और बहुत मान-मनौव्वल के बाद ही खाने को राजी हुआ। क्रोधित कुत्ते की तरह हल्के-हल्के गुर्राते हुए मैं ने डटकर खाया और फिर बिस्तर पर मुँह फुलाए पसर गया।

पत्नी घर का काम निबटाकर घंटे भर बाद मेरे बगल में चुपचाप आकर लेटी। मैंने महसूस किया वह नहाकर आई है। उसके भीगे बालों से चमेली के तेल की-सी गंध आ रही थी। मेरी ऐंठी हुई स्नायु अनजाने ही मुलायम पड़ने लगी थी। बिस्तर पर मंचित होने वाले एक वैवाहिक नाटक की भूमिका के लिए मैं मन ही मन तैयार होता हुआ जाहिर तौर पर किसी शव की तरह बिना हिले-डुले पड़ा हुआ था। मेरी पीठ के पीछे चूड़ियाँ छनक रही थीं, पाजेब झनक रहे थे और मै दुर्बल पड़ता जा रहा था। स्थिति ये थी कि एक संकेत मात्र की प्रतीक्षा में मैं व्यग्र हुआ जा रहा था। सत्यानाश हो हमारी स्त्रियों की इस भारतीय लाज लज्जा और संकोच का। एक-एक पग उठाने में सदियाँ बिताती हैं। इस तरह तो पूरी रात ही ढल जाएगी। कल फिर सोमवार। ऑफिस के काम में जुटना पड़ेगा। मेरी स्नायु में तनाव अब चक्रवात का भयंकर रूप लेने लगा था, खुद को सँभालना कठिन हो रह था और यस! तभी मेरी पत्नी का ढाई किलो का सनी देओल मार्का हाथ मेरी पीठ पर हल्के से पड़ा और मै तत्क्षण फिरकी की तरह घूम कर उससे लिपट गया था। वह भी किसी लता की तरह मेरी देह से लग गई थी। थोड़ी देर तक मान-मनुहार जैसे निरर्थक और टाइमपास बातों का आदान-प्रदान हुआ और फिर हम मुख्य मुद्दे पर आ गए...।

जैसा कि सारे विवाहित व्याक्ति जानते हैं, दुनिया के सारे वैवाहिक झगड़े बिस्तर पर ही सुलझाए जाते हैं। संधि समय लगभग वही एक - १२ बजे... कॉम्प्रोमाइज एट मिडनाइट!

अपनी पत्नी के प्रति पहले की तरह रोमैंटिक महसूस करना अब इतना सहज नहीं रह गया था। खासकर उसके वर्तमान रूप-रंग में। आखिर किया भी क्या जा सकता है इस मामले में। ये दिल माँगे मोर यू नो... सो, अपनी पत्नी को बर्दाश्त करने के लिए तथा इन क्षणों को कुछ ज्यादा रोचक बनाने के लिए मैंने मन ही मन अपनी अमला भाभी का आह्वान किया और वह तत्क्षण मंदाकिनी की तरह जलप्रपात सहित हमारे बिस्तर पर अवतरित हो गईं। मैंने अपनी पत्नी का नाम होठों ही होठों में दुहराते हुए मंदाकिनी देवी के दर्शन में मन लगाया। इससे पहले कि मैं आगे की मुख्य कार्यवाही शुरू कर पाता, यकायक मेरी पत्नी भी अप्रत्याशित रूप से दुःसासन का अवतार ग्रहण करते हुए मेरे चीरहरण मे उद्धत हो गई।

मै अवाक, हतवाक... मुझे जोर का झटका वाकई जोर से लगा और मैं सुखद आश्चर्य से भरकर उस अँधेरे में ही उसे आँखें फाड़-फाड़ कर देखने का प्रयत्न करने लगा। आज तो चमत्कार ही हो गया। अपनी नौगजी साड़ी में हर मौसम में सर से पैर तक मुड़ी रहनेवाली मेरी लाजवंती पत्नी जो विवाह के बीस वर्ष बाद भी बंद कमरे में नई दुल्हन

की तरह शरमाती है, आज यकायक राखी सावंत जैसी बोल्ड (मगर नहीं ब्यूटीफुल) होकर मेरा चीरहरण करने पर उतारू हो गई थी। मगर मैं भी कौन सा द्रौपदी था कि रोकर अपने सखा को स्मरण करता। निर्लज्ज पुरुष होने के नाते उल्टे प्रसन्नता में दाँत निकाल कर हँस रहा था। चलो ये कुछ काम की तो हुई, चाहे फिर इतनी देर से ही सही। देर आए दुरुस्त आए। दिगंबरप्राय होकर मैं उसे भी अपने संप्रदाय में सम्मिलित करने के लिए प्रवृत्त हुआ। मगर वह बिना मेरी सहायता के ही स्वयं इस शुभ कार्य को संपन्न कर बैठी। इसे कहते हैं स्वाबलंबी होना! अंधकार में जो कुछ भी दृष्टिगोचर हो रहा था उसे निरखकर मैं आनंद से भावविह्वल होकर अपनी आँखें मूँदकर कह बैठा - 'अमला भाभी, तुम कितनी सुंदर हो।' इससे पहले कि अपनी भयंकर गलती का अहसास कर मैं अपनी जीभ को रगड़ दे कर रोकता झट से अंधकार में श्रीमतीजी का स्वर गूँजा था - 'आप भी तो कितने हैंडसम हैं त्रिपाठी भाई साहब।'

धड़ाम! सदी का तीसरा एटम बम गिरा था और दुनिया के नक्शे से एक और हिरोशिमा मटियामेट हो गया था। मैं बिजली का भयंकर झटका खाकर खाट से नीचे गिर पड़ा था और अंधकार में होश खोकर संज्ञाहीन होने से पहले अपनी पत्नी का घबड़ाया हुआ स्वर सुनता रहा था - 'सुनिए जी! ये आपको क्या हो गया... एक ही नाम सुनकर गश खा गए? मैं तो आपके मुँह से न जाने किस-किस का नाम सुन-सुनकर भी आज तक अपना होश सँभाले हुए हूँ।' उसके प्रश्नों का उत्तर न देकर मैंने फिलहाल अचेत हो जाना ही श्रेयस्कर समझा। उस समय ठीक १२ बजे थे और मेरा छुट्टी का दिन समाप्त हो चुका था।

https://www.hindiadda.com/chhuttee-ka-din/